बाबू राजेन्द्रप्रसाद

छात्रहितकारी पुस्तकमाला, प्रयाग

बाल-चरितमाला नं० १९

देशरत्न बाबू राजेन्द्रप्रसाद

—:o:—

लेखक—

बाबू बलदेव सिंह 'विशारद'

प्रकाशक—

छात्रहितकारी पुस्तकमाला,

दारागंज, प्रयाग

प्रथम संस्करण १५००] अक्टोबर १९३४ [मूल्य ।)

देशरत्न बाबू राजेन्द्रप्रसाद

——(:०:)——

बचपन

देश या राष्ट्र में समय-समय पर बड़े लोगों का उत्पन्न होना उसके जीवित होने की निशानी है। बिहार में भी एक के बाद एक महापुरुष जन्म ग्रहण करते आये हैं। देशरत्न बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी उन्हीं महापुरुषों में हैं। इनके कारण आज बिहार का नाम सारे देश में आदर के साथ लिया जाता है।

प्राचीन काल में बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी के पूर्वज फतेहपुर सिकरी में रहते थे। इनका घराना बड़ा मशहूर घराना रहा है। कई पुश्तों से इनके

पूर्वज भिन्न भिन्न राज्यों के दीवान होते आये। फतहपुर सिकरी राज्य के दीवान इनके पूर्वज ही थे।

करीब दो सौ वर्ष पहले इनके पूर्वज फतहपुर सिकरी से युक्तप्रान्त के अमोढ़ा नामक स्थान में चले आये। यहाँ से ये लोग सारन जिला के जोरा-देई गाँव में पहुँचे। यहाँ इनके वंश में दीवान चौधुरलाल बड़े ही योग्य और लोकप्रिय व्यक्ति हुए। ये सारन जिला के हथुआ राज के दीवान थे। ये राज्य के सुप्रबन्ध के लिये बड़े प्रसिद्ध थे। ये बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी के पितामह बाबू मिश्रीलाल के भाई थे।

बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी के पिता का नाम बाबू महादेवसहाय था। बाबू महादेवसहाय जब डेढ़ वर्ष के थे तभी इनके पिता का देहान्त हो गया। इसलिये इनके लालन-पालन का भार दीवान चौधुरलाल पर पड़ा। बाबू महादेवसहाय एक बड़े ही दयालु स्व-भाव के आदमी थे। दीन-दुखियों की सेवा करने में इनका बड़ा मन लगता था। ये अपने खर्च से रोगियों को दवा बाँटा करते थे।

इन्हीं साधु-स्वभाव पिता के योग्य पुत्र बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी हुए। इनका जन्म जीरादेई गाँव में संवत् १९४१ के अगहन की पूर्णिमा तदनुसार ३ दिसम्बर सन् १८८४ ई० को हुआ। इनका कुल श्रीवास्तव्य कायस्थ कुल कहलाता है। पिता के समान इनकी माता भी बड़ी सुशील और धर्मात्मा थीं। राजेन्द्र बाबू पर इनके माता-पिता के गुणों का बहुत अधिक प्रभाव पड़ा है।

बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी की तीन बहनें और एक भाई थे। ये अपने सभी भाई-बहनों से छोटे हैं। इस समय इनकी सिर्फ बड़ी बहन बच गयी हैं। बड़े भाई बाबू महेन्द्रप्रसाद जी की अभी हाल ही में मृत्यु हो गई।

विद्यारम्भ

६-७ वर्ष की उम्र में बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी गाँव के एक मौलवी साहब के यहाँ पढ़ने के लिये बैठाये गये। उन दिनों मौलवी और पंडित ही बालकों को फारसी और संस्कृत की शिक्षा देते थे। बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी थोड़े ही दिनों में फारसी

लिखना-पढ़ना सीख गये। इन्होंने फारसी की कई किताबें खत्म कर डालीं। इससे इनकी तेज बुद्धि का पता चलता है।

९ वर्ष की उम्र में मौलवी साहब की पढ़ाई खतम करके इन्होंने सन् १८९३ ई० में छपरा जिला स्कूल में अपना नाम लिखाया। मौलवी साहब के पास इन्होंने सिर्फ फारसी लिखना-पढ़ना सीखा था। जिला स्कूल में इन्होंने अंग्रेजी और हिन्दी पढ़ना शुरू किया। थोड़े ही दिनों में इन्हें हिन्दी लिखना-पढ़ना आ गया।

इनकी तेज बुद्धि से स्कूल के शिक्षक बहुत खुश रहते थे। इनकी प्रतिभा देखकर शिक्षकों ने इन्हें 'डबल प्रोमोशन' दुहरी तरक्की दी और ये आठवीं श्रेणी से छठीं श्रेणी में पहुँच गये। नीची की श्रेणियों में इनका स्थान द्वितीय तृतीय रहता था, पर ऊपर की श्रेणियों में ये सदा प्रथम स्थान पाते रहे। सन् १९०२ ई० के मार्च महीने में इन्होंने कलकत्ता विश्व-विद्यालय के इन्ट्रेन्स की परीक्षा दी। विश्व-विद्यालय भर में सर्व-प्रथम आये। उस समय बंगाल, बिहार, आसाम, उड़ीसा और बर्मा, कलकत्ता

विश्व-विद्यालय में ही शामिल थे। इतनी जगहों के विद्यार्थियों में पहला नम्बर पाना राजेन्द्र बाबू जैसे तेज बुद्धिवालों के लिये ही सम्भव है। इसके लिये इन्हें ३०) की मासिक छात्रवृत्ति दी गई।

राजेन्द्र बाबू पढ़ने-लिखने में इतने तेज थे, इससे यह न समझना चाहिए कि ये दिन-रात केवल पढ़ते ही रहते थे। ये पढ़ने के समय पढ़ते और खेलने के समय खेलते थे। इनकी गिनती फुटबाल के अच्छे खिलाड़ियों में होती थी। हाँ, शारीरिक उन्नति की जगह मानसिक उन्नति की ओर आप अधिक ध्यान देते थे। यही कारण है कि आपका स्वास्थ्य प्रायः खराब रहता आया है। इन्होंने पढ़ने-लिखने में कभी लापरवाही नहीं दिखायी।

स्कूल से ही इन्हें लेख लिखने और व्याख्यान देने का अभ्यास है। ये अपने स्कूल की वाद-विवाद-सभा की बैठकों में बड़े उत्साह से भाग लेते थे। इन्होंने स्कूल से अलग भी एक वाद-विवाद-सभा स्थापित की थी।

कालेज में

सन् १९०२ में राजेन्द्र बाबू ने कलकत्ते के

प्रेसिडेन्सी कालेज में नाम लिखाया । पहले वर्ष (फर्स्ट इयर) में आप कलकत्ते में ही बीमार पड़े और दशहरे की छुट्टी तक बीमार ही रहे। लेकिन जब सन् १९०४ में एफ० ए० की परीक्षा हुई तो आपका दर्जा सबसे ऊँचा रहा—आप सर्वप्रथम हुए। इसके लिये आपको ५०) मासिक की छात्रवृत्ति मिली। इसके अलावा इनाम में बहुत सी किताबें और सोने एवं चाँदी के कई पदक भी मिले। कालेज में आपके विषय अंग्रेजी, गणित, फारसी, विज्ञान, तर्कशास्त्र और स्वास्थ्य-विज्ञान थे। आपने डा० सर जगदीश-चन्द्र बसु और डा० प्रफुल्लचन्द्र राय से एफ० ए० में विज्ञान की शिक्षा प्राप्त की थी। आप इन दोनों अध्यापकों के बड़े प्रिय-पात्र थे।

राजेन्द्र बाबू ने एफ० ए० की परीक्षा में बहुत अधिक मिहनत की थी। इन्ट्रेन्स की परीक्षा में इनके सर्वप्रथम होने की सम्भावना नहीं थी, इस-लिये इन्होंने विशेष परिश्रम नहीं किया था। एफ० ए० की परीक्षा में अधिक मिहनत करने के कारण थे। एक तो ये स्वयं सर्वप्रथम होना चाहते थे, दूसरा इनके स्कूल के शिक्षक श्री रसिकलाल

राय ने भी इन्हें सावधान कर दिया था। उन्होंने कहा था कि राजेन्द्र, देखना वहाँ बंगाली विद्यार्थी तुम्हें इन्ट्रेन्स में सर्वप्रथम हुआ जान तुम्हें हराने की कोशिश करेंगे। तुम पढ़ने में कभी लापरवाही नहीं करना। रसिकलाल जी की बातों को राजेन्द्र बाबू सदा ध्यान में रखे रहे। इसीका परिणाम था कि राजेन्द्र बाबू ने जी-तोड़ मिहनत कर पहला नम्बर प्राप्त किया।

राजेन्द्र बाबू एफ० ए० में विज्ञान बड़ी मिहनत से पढ़ते थे। इनका विचार बी० ए० में भी विज्ञान ही लेने का था। पर बहुत अधिक मिहनत के बाद भी ये विज्ञान में सर्वप्रथम न आकर कला के विषयों में सर्वप्रथम आये। इससे खिन्न होकर इन्होंने बी० ए० में विज्ञान न लेकर कला के विषय ही लिये। बी० ए० में और विषयों के साथ ऐच्छिक विषयों में देशी भाषाएँ थीं। इनमें से भी एक भाषा लेनी पड़ती थी। राजेन्द्र बाबू ने इनमें से हिन्दी पसन्द की। शुरू से अब तक तो ये फारसी पढ़ते रहे, लेकिन अब हिन्दी लेली। उस समय इसकी पढ़ाई के लिये भी कोई प्रबन्ध कालेज

में नहीं था। इतनी दिक्कतों के होते हुए भी राजेन्द्र बाबू ने घर पर पढ़कर ही इसकी परीक्षा दी और सम्मान सहित पास हो गए।

सन् १९०६ में राजेन्द्र बाबू ने बी० ए० की परीक्षा दी और यूनिवर्सिटी भर में सर्वप्रथम आये। इस बार इन्हें ९०) रुपये मासिक छात्रवृत्ति मिलने लगी। कलकत्ता-विश्वविद्यालय बहुत पुराना है, लेकिन राजेन्द्र बाबू को छोड़ कोई भी बिहारी-छात्र अभी तक लगातार इन्ट्रेन्स, एफ० ए० और बी० ए० में सर्वप्रथम नहीं आ सका है। बंगाल में भी कुछ इने-गिने छात्र ही इस गौरव को प्राप्त कर सके हैं।

राजेन्द्र बाबू कालेज में भी सिर्फ पढ़ने-लिखने में ही नहीं लगे रहते थे। वाद-विवाद-सभा और लेखादि लिखने में इनकी स्कूली-जीवन के समान ही रुचि थी। सार्वजनिक कामों में भी ये काफी दिलचस्पी रखते थे। ये कलकत्ते के प्रेसिडेन्सी कालेज की वाद-विवाद-सभा और कालेज-यूनियन के संस्थापकों में एक थे। आप इन दोनों संस्थाओं के मंत्री भी रह चुके हैं।

सन् १९०६ में इन्होंने एम० ए० में नाम लिखाया।

इस समय इनका विचार इंगलैंड जाकर बैरिस्ट्री पढ़ने का हुआ। इन्होंने इसके लिये तैयारी करनी भी शुरू कर दी। अपनी इस तैयारी की खबर इन्होंने अपने घरवालों को नहीं दी। सिर्फ अपने बड़े भाई बाबू महेन्द्रप्रसाद जी को इन्होंने अपने विचार लिख भेजे। राजेन्द्र बाबू जैसे विद्यार्थी को इंगलैंड जाने में भला क्या कठिनाई हो सकती थी। सभी प्रबन्ध कुछ दिनों में ही पूरा हो गया, पर होनहार कुछ और था। घरवालों को जब इनका इरादा मालूम हुआ तो वे बड़े दुःखित हुए। इनके रोगी पिता नहीं चाहते थे कि अन्तिम समय में मेरा लाड़ला लड़का इतनी दूर जाय। माता तो किसी दशा में भी पुत्र-वियोग नहीं सहन कर सकती थी। अन्त में पिता की बीमारी अच्छी होने तक राजेन्द्र बाबू ने अपनी इंगलैंड-यात्रा रोक रखी। दुर्भाग्य से इनके पिता की बीमारी दिन-दिन बढ़ती गयी और सन् १९०७ के मार्च में उनका देहान्त हो गया। अब तो इनका अपनी शोकाकुल माता को छोड़ इंगलैंड जाना और भी कठिन हो गया। इन्हें आखिर में अपना विचार छोड़ देना पड़ा।

पिता की मृत्यु के बाद भी राजेन्द्र बाबू ने अपनी पढ़ाई जारी रखी, पर इनका मन पूरी तरह से इस ओर लगता नहीं था। इसके साथ ही ये सार्वजनिक कार्यों में अधिकाधिक योग देने लगे। सन १९०६ के स्वदेशी-आन्दोलन से राजेन्द्र बाबू अलग नहीं रह सके। इन्होंने शक्ति भर उसमें सहायता की। इन बातों का परिणाम यह हुआ कि सन् १९०७ की एम० ए० परीक्षा में ये सर्वप्रथम नहीं आ सके। इन्हें द्वितीय श्रेणी और पाँचवा स्थान मिला। एम० ए० की तैयारी सार्वजनिक कामों में लगे रहने के कारण अच्छी तरह नहीं हो पाई। एम० ए० के साथ-साथ राजेन्द्र बाबू ने कानून पढ़ना भी शुरू किया था, पर इसकी परीक्षा इन्होंने १९०७ में नहीं दी। आगे चलकर सन् १९१० में ये कानून की परीक्षा दे सके।

भावी नेता

आगे चलकर देश में राजेन्द्र बाबू का एक खास स्थान होगा, यह बात इनके विद्यार्थी-जीवन से ही साफ दिखायी पड़ने लगी थी। उन

दिनों का इनका रहन-सहन, वेश-भूषा, सभी इनकी भावी महानता को प्रकट करते थे। एक बार इनकी लगन और प्रतिभा को देखकर सिस्टर निवेदिता ने कहा था—'ये भारत के भावी नेता हैं।' आज हम सचमुच इन्हें अपने हृदय-सम्राट के रूप में देख रहे हैं।

राजेन्द्र बाबू शुरू से ही सार्वजनिक एवं संगठन के कामों में भाग लेते रहे हैं। इन्हें ऐसे कामों में स्वाभाविक आनन्द मिलता है। जब ये १९०२ में पढ़ने के लिये कलकत्ता गए तो वहाँ उसी साल 'बिहारी-क्लब' नाम की एक संस्था स्थापित की गई। इसका उद्देश्य बिहारी विद्यार्थियों को हर प्रकार का आराम पहुँचाना था। जो बिहारी विद्यार्थी पढ़ने के लिये कलकत्ता पहुँचते थे उनके रहने और कालेज में भर्ती होने के लिये सभी प्रकार की सुविधा जुटाना, इस संस्था का काम था। राजेन्द्र बाबू कई वर्षों तक इस क्लब के मंत्री रहे। इसमें बिहारी छात्रों के सिवा कलकत्ते के अन्य बिहारी भाई भी भाग लेते थे। धीरे-धीरे यह संस्था बहुत मशहूर हो गई।

बिहारी क्लब में ही पहले-पहल बिहारी-छात्र-सम्मलेन करने का विचार किया गया था। सन् १९०६ में बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी के परिश्रम से इसका प्रथम अधिवेशन पटने में किया गया। कलकत्ता में 'डौन सोसाइटी' नाम की एक संस्था थी। यह विद्यार्थियों की मानसिक उन्नति के लिये स्थापित की गई थी। इसमें विद्वानों के भाषण कराये जाते थे। उन भाषणों को अच्छी तरह समझ कर जो विद्यार्थी सब से सुन्दर नोट लिखता था, उसे साल के अन्त में इनाम और छात्र-वृत्तियाँ मिलती थीं। राजेन्द्र बाबू को भी कई इनाम और छात्रवृत्तियाँ मिली थीं।

राजेन्द्र बाबू ने विद्यार्थी-जीवन से ही अपना एक आदर्श बना लिया था। उसी पर ये आज तक बढ़ते जा रहे हैं। शौकीनी और बढ़िया कपड़े पहनने की ओर इनकी शुरू से ही रुचि नहीं रही है। सेवा और परोपकार इनके जीवन का आरम्भ से ही ध्येय रहा है। एक भावी नेता या महा पुरुष के गुण इनमें शुरू से ही झलकने लगे थे। सच है—'होनहार बिरवान के होत चीकने पात'।

स्वदेशी-प्रेम

राजेन्द्र बाबू में स्वदेश और स्वदेशी का भाव कितना भरा है यह बात इनके विद्यार्थी-जीवन से ही दिखायी पड़ने लगती है। ये अपनी शक्ति भर स्वदेशी चीज़ों का ही इस्तेमाल करते थे। ऊपर जिस 'डौन सोसाइटी' का जिक्र आया है उसमें एक शिल्प-विभाग भी था। उसमें देश के चरखे और करघे से बुने कपड़े और अन्य दूसरी स्वदेशी चीज़ों का प्रदर्शन और विक्रय होता था। जो खरीदार साल भर में सबसे अधिक माल खरीदता था उसे पुरस्कार भी दिया जाता था। राजेन्द्र बाबू को भी कई बार यह पुरस्कार मिला था।

इन्होंने अपने स्वदेशी-प्रेम के आगे अपनी पढ़ाई की भी परवाह नहीं की। बंगाल में सन् १९०६ में स्वदेशी-आन्दोलन बड़े जोरों से शुरू हुआ था। भला राजेन्द्र बाबू से स्वदेशी-भक्त उस आन्दोलन से कैसे अलग रहते। इन्होंने उसमें भरपूर सहायता की। इसका नतीजा यह हुआ कि एम० ए० की परीक्षा में ये सर्वप्रथम नहीं हो

सके। इससे राजेन्द्र बाबू की स्वदेशी-भक्ति में जरा भी फर्क नहीं पड़ा। इन्होंने इन्ट्रेन्स के बाद किसी परीक्षा में विदेशी निब का इस्तेमाल नहीं किया। इनकी स्वदेशी-भावना सभी विद्यार्थियों के लिये अनुकरणीय है।

गृहस्थी

राजेन्द्र बाबू एक गृहस्थ साधु हैं। इन्हें देश-सेवा के आगे दुनियादारी एक तुच्छ चीज़ जँचती है। इन्हें अपनी धुन के आगे स्त्री-पुत्र, घर-द्वार का मोह कभी लुभा नहीं सकता। इन्हें परोपकार और त्याग में स्वर्ग-सुख का अनुभव होता है।

इनका विवाह लड़कपन ही में हो गया था। ये उस समय पाँचवें दर्जे में पढ़ते थे। इनका विवाह बलिया जिला के दलनछपरा नाम के गाँव में हुआ था। इनके स्वसुर थे बाबू हरनन्दनलाल मोख्तार।

राजेन्द्र बाबू के दो पुत्र हैं। बड़े का नाम है बाबू मृत्युञ्जयप्रसाद और छोटे का बाबू धनञ्जयप्रसाद। राजेन्द्र बाबू को अपने घर-बार की चिन्ता कभी

नहीं करनी पड़ी । जब तक इनके बड़े भाई बाबू महेन्द्रप्रसाद जी जीवित रहे ये स्वतन्त्र होकर देश सेवा में लगे रहे । बाबू महेन्द्रप्रसाद जी ने राजेन्द्र बाबू को हर प्रकार से ऊँचा उठाने में काफी मदद दी थी । इधर हाल में उनके मरने के बाद राजेन्द्र बाबू पर पारिवारिक भार भी आ पड़ा है ।

राजेन्द्र बाबू के समान ही इनके परिवार के सब लोग भी स्वदेशी के भक्त हैं । समय-समय पर इनका परिवार सामाजिक बुराइयों को दूर करने में भी साहस के साथ भाग लेता रहा है । सन् १९०४ की बात है । सुप्रसिद्ध गणितज्ञ डा० गणेश प्रसाद जो इंगलैंड से लौटकर आये थे । गाँव वालों ने इनका बहिष्कार कर दिया । उस समय राजेन्द्र बाबू के परिवार ने ही सब से आगे बढ़कर डा० गणेशप्रसाद जी को गले से लगाया था और उनके यहाँ खुले दिल से भोजन किया था ।

इनके परिवार ने पर्दा-प्रथा को भी दूर कर दिया है । अपने ही समान अपने घर की महिलाओं को भी लोक-सेवा में लगाने के विचार से बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी ने अपनी स्त्री और पुत्रवधू को

गाँधी जी के साबरमती आश्रम में शिक्षा प्राप्त करने के लिये भेजा था। इनकी बड़ी बहन श्रीमती भगवतीदेवी जी देश-सेवा में बराबर भाग लेती रहती हैं। सन् १९३३ के सत्याग्रह आन्दोलन में इन्हें भी तीन महीने की सजा मिली थी।

राजेन्द्र बाबू के घर की आर्थिक दशा साधारणतः अच्छी है। इन्हें इस सम्बन्ध में अधिक चिन्ता नहीं करनी पड़ती। जब तक इनके बड़े भाई जीवित थे तब तक तो इन्हें जरा भी उधर ध्यान देने की जरूरत नहीं रहती थी। राजेन्द्र बाबू के परिवार में इस समय इनके दो पुत्र और पुत्र-वधुएँ, स्त्री, बड़ी विधवा बहन तथा बड़े भाई के बाल-बच्चे हैं।

प्रोफेसरी

बाबू राजेन्द्र प्रसाद जी ने सन् १९०७ में एम०ए० परीक्षा पास की। विद्यार्थी-जीवन के बाद इनकी इच्छा वकालत करने की थी, लेकिन कुछ दिनों तक इन्होंने प्रोफेसरी कर ली। उन दिनों मुजफ्फरपुर के भूमिहार ब्राह्मण कालेज में योग्य

प्रोफेसरों की बड़ी जरूरत थी। राजेन्द्र बाबू अपने विद्यार्थी-जीवन की सफलता के कारण काफी प्रसिद्ध हो चुके थे। मुजफ्फरपुर कालेज के अधिकारियों के बार बार अनुरोध करने पर आपने वहाँ प्रोफेसरी करना मंजूर कर लिया। आप अंग्रेजी के प्रोफेसर नियुक्त किये गये। अंग्रेजी के अलावा ये इतिहास, अर्थशास्त्र और राजनीति भी पढ़ाया करते थे। इस बीच कुछ दिनों के लिये आप भूमिहार कालेज के प्रिंसिपल भी रहे। थोड़े दिनों तक प्रोफेसरी कर आप कलकत्ते चले गये। पहले ही कहा जा चुका है कि इनको इच्छा वकालत करने की थी, इसीलिये ये उसकी तैयारी के लिये कलकत्ते चले आये।

वकालत की तैयारी करते समय सन् १९०९ में इन्होंने थोड़े समय के लिये फिर प्रोफेसरी ग्रहण कर ली। कलकत्ता सिटी कालेज के इतिहास और अर्थशास्त्र के प्रोफेसर छुट्टी पर थे। उनके लौटने तक उनकी जगह पर इनकी नियुक्ति की गयी। वहाँ भी इन्होंने बड़ी योग्यता से काम किया। इनके काम की लोगों ने खूब प्रशंसा की।

राजेन्द्र बाबू जिस वक्त वकालत कर रहे थे,

उस समय भी इन्होंने प्रोफेसरी की थी। कलकत्ता विश्वविद्यालय के ला-कालेज में आप कानून के प्रोफेसर नियुक्त किये गये। विश्वविद्यालय के वाइस-चान्सलर सर आशुतोष मुकर्जी ने विश्व-विद्यालय में बड़े योग्य-योग्य कानून के विद्वान् इकट्ठे किये थे। उन्होंने राजेन्द्र बाबू से भी ला कालेज में आने का अनुरोध किया। ये उस कालेज में सन् १९१४ से सन १९१६ के मार्च तक रहे। इन्होंने जहाँ-जहाँ प्रोफेसरी की अपनी योग्यता और प्रतिभा का सभी जगह परिचय दिया।

वकालत

राजेन्द्र बाबू एम० ए० के साथ-साथ कानून भी पढ़ रहे थे। एम० ए० की परीक्षा तो इन्होंने १९०७ में दे दी थी, पर कानून की परीक्षा इन्होंने सन् १९१० में दी। मुजफ्फरपुर से सन् १९०९ में कलकत्ते आकर इन्होंने वकालत की तैयारी शुरू कर दी। इसके लिए अनुभव प्राप्त करने की गरज से कुछ दिनों तक ये कलकत्ते के दो-एक नामी वकीलों के साथ काम करते रहे। कुछ दिनों तक ये

वहाँ के नामी वकील श्री जाहिद सुहरावर्दी के यहाँ क्लर्क रहे। फिर वहीं के दूसरे वकील सर सैयद शम्स-उल हुदा साहब के यहाँ भी कुछ दिनों तक क्लर्क का काम करते रहे।

राजेन्द्र बाबू ने सन् १९१० में बी० एल० की परीक्षा पास करली। सन् १९११ के अगस्त मास से इन्होंने कलकत्ता हाईकोर्ट में वकालत शुरू कर दी। राजेन्द्र बाबू कलकत्ते में पहले से ही मशहूर हो चुके थे। वकालत शुरू करते ही इनको मुकदमे मिलने लगे। और दूसरे नये वकीलों के समान इन्हें शुरू में अपने घर से खर्च करके वकालत चलाने की जरूरत नहीं पड़ी। धीरे-धीरे ये कलकत्ते के नामी वकीलों में गिने जाने लगे। वहाँ के नामी वकीलों में लार्ड सिनहा, श्री देशबन्धु दास, श्री-हसनइमाम साहब, सर गणेशदत्त सिंह, आदि थे। ये सभी राजेन्द्र बाबू की प्रतिभा पर चकित थे। राजेन्द्र बाबू को कई बार श्री देशबन्धु दास और डा० सर रासबिहारी घोष के साथ काम करने का मौका मिला था। ये दोनों ही इनके कार्यों से बड़े प्रसन्न रहा करते थे।

सन् १९१५ में राजेन्द्र बाबू ने एम० एल० की परीक्षा दी। इस परीक्षा में आपको पहला दर्जा और पहला स्थान मिला। इस परीक्षा में आपको इतने नम्बर मिले कि शायद ही किसी को कभी इतने नम्बर मिले हों। बात यह थी कि इस परीक्षा में इनके साथी गया जिला के बाबू वैद्यनाथ नारायणसिंह थे। उन्होंने इन्हें बहुत प्रोत्साहित किया और कहा–'राजेन्द्र बाबू आपने एम० ए० और बी० एल० की परीक्षाओं में अपना सर्वप्रथम स्थान खो दिया है। इस बार उसे अवश्य प्राप्त कीजिये।' अपने साथी की बात राजेन्द्र बाबू को जँच गयी और कठिन परिश्रम कर परीक्षा में सर्वप्रथम आये।

सन् १९१६ तक राजेन्द्र बाबू कलकत्ता हाई-कोर्ट में वकालत करते रहे। इसके बाद पटना हाई-कोर्ट खुलने पर ये वहाँ वकालत करने चले गये। यहाँ भी इनकी वकालत खूब चमक उठी, आमदनी काफी होने लगी। इनकी आमदनी से घरवालों को अधिक लाभ नहीं मिल पाता था। इनका सारा रुपया सेवा-कार्यों और गरीब विद्यार्थियों का खर्च

चलाने में ही खर्च होता था। आगे चलकर इनकी आमदनी तीन हजार रुपये मासिक की हो गई थी, पर वकालत छोड़ते वक्त इनके नाम बैंक में सिर्फ १५) रुपये जमा निकले। इनकी परोपकार-भावना और त्याग का इससे बढ़कर और क्या उदाहरण हो सकता है।

सर्वेन्ट्स आफ इन्डिया सोसाइटी

यों तो राजेन्द्र बाबू का सार्वजनिक कामों की ओर शुरू से ही झुकाव रहा है, पर पूरी तौर से उसमें लग जाने की कोशिश इन्होंने अपने प्रोफेसरी के दिनों में की थी। उन दिनों महात्मा गोखले चाहते थे कि बिहार में भी कुछ ऐसे नवयुवक तैयार हों जो सेवा के लिये अपने आपको अर्पण कर दें। स्वर्गीय श्रीपरमेश्वर लाल जी उन दिनों बिहार के नामी राजनीतिक नेता थे। महात्मा गोखले ने उन्हीं से कुछ बिहारी नवयुवकों की माँग पेश की। परमेश्वरलाल जी ने झट से राजेन्द्र बाबू का नाम बता दिया और स्वयं इनसे जाकर कह आये कि गोखले महाराज आपसे मुलाकात

करना चाहते हैं। जब ये उनसे मिलने गये तब उन्होंने सोसाइटी में सहयोग देने का अपना प्रस्ताव इनके आगे रखा। राजेन्द्र बाबू महात्मा गोखले जैसे बड़े नेता की बात का तुरन्त कोई उत्तर नहीं दे सके। इन्होंने पीछे सोच कर जवाब देने की बात कही।

गोखले जी के पास से लौट कर राजेन्द्र बाबू बीस दिनों तक लगातार उनकी बात पर विचार करते रहे। अन्त में अपने सारे विचारों को पत्र-रूप में लिख कर इन्होंने अपने बड़े भाई को दिया। राजेन्द्र बाबू के लिये गोखले जी का प्रस्ताव मन-चाहा था। ये तो सदा लोक-सेवा के अवसर की ताक में रहा ही करते थे। ऐसे सुअवसर को ये कब छोड़ने वाले थे। उस पत्र में राजेन्द्र बाबू ने बड़े ही विनम्र शब्दों में अपने बड़े भाई से गोखले जी की सोसाइटी में सम्मिलित होने की आज्ञा माँगी थी। इन्होंने अपनी सेवा-भावना को काम के रूप में कर दिखाने की सम्मति माँगी थी।

बड़े भाई ने इनके पत्र को पढ़ कर इन्हें बहुत समझाया। वे नहीं चाहते थे कि राजेन्द्र बाबू

सोसाइटी में सम्मिलित हों। इन्होंने अपनी शक्ति भर सब प्रकार से अपने बड़े भाई को मनाने की कोशिश की। अन्त में जब इन्होंने देखा कि मेरे प्रस्ताव से बड़े भाई को बहुत दुःख होगा तो इन्होंने सोसाइटी में सम्मिलित होने का अपना विचार छोड़ दिया। इस घटना से राजेन्द्र बाबू में त्याग और सेवा का भाव कितना कूट-कूट कर भरा है, यह साफ मालूम होता है। उस समय सोसाइटी में राजेन्द्र बाबू का नहीं सम्मिलित होना, आज हमारे लिये बहुत हितकर साबित हुआ है। यदि उस समय ये उसमें भर्ती हो जाते तो आज सारे देश का इतना अधिक हित होना सम्भव नहीं था।

छात्र-संगठन

राजेन्द्र बाबू के सार्वजनिक जीवन में सबसे पहला प्रमुख काम छात्र-संगठन का है। इन्होंने ही सबसे पहले इस काम की आवश्यकता समझी थी। उस समय सारे भारत में कहीं भी विद्यार्थियों का कोई संगठन नहीं था। देशरत्न राजेन्द्र

बाबू के दिमाग में ही यह बात उत्पन्न हुई थी कि विद्यार्थियों का संगठन होना चाहिये। ये समझते थे कि आगे चलकर विद्यार्थी ही राष्ट्र के चलाने वाले होंगे।

जिस समय यह विचार राजेन्द्र बाबू ने किया। उस समय ये एम० ए० में पढ़ते ही थे। २२ वर्ष की उम्र में इतना महत्वपूर्ण काम करना इन्हीं से प्रतिभावन लोगों का काम है। सन् १९०६ में बंग भंग के समय लार्ड कर्ज़न ने बड़ा अपमान-जनक भाषण दिया था। उसके कारण विद्यार्थियों में बड़ा जोश फैला। राजेन्द्र बाबू और इनके साथी भी कुछ कर दिखाने की सोचने लगे। उन्होंने बिहारी विद्यार्थियों का संगठन करने का विचार किया। बिहारी क्लब में इस बात पर विचार किया गया। सबों ने इस पर अपनी स्वीकृति दी। अन्त में उसी साल दशहरे की छुट्टी में 'बिहारी छात्र-सम्मेलन' का प्रथम अधिवेशन पटना कालेज-हाल में कर लिया गया।

बिहारी छात्र-सम्मेलन अपने ढंग की निराली संस्था थी। इसने बिहार के विद्यार्थी-समाज में

जान सी डाल दी। जगह जगह इसकी शाखाएँ खोली गयीं। हर जगह पुस्तकालय और वाचनालय के साथ-साथ वाद-विवाद-सभाएँ स्थापित की गईं। लड़कों के खेल-कूद और व्यायामादि का भी प्रबन्ध किया गया। उन्हें प्रोत्साहन देने के लिये पुरस्कार बाँटने का भी प्रबन्ध किया गया। असहयोग आन्दोलन शुरू होने तक इस संस्था का हर साल खूब धूमधाम से अधिवेशन होता रहा। देश के बड़े-बड़े राजनीतिक नेताओं ने इसके सभापति पद को सुशोभित किया है। इसके स्थापित होते ही देश के प्रमुख पत्रों ने इसकी प्रशंसा की थी। बंगाल के 'इंडियन मिरर' नाम के अंग्रेजी पत्र ने लिखा था :—

'बिहार के विद्यार्थियों ने अपनी भावी उन्नति के लिये एक व्यावहारिक कार्यक्रम निश्चित कर लिया है। उन्होंने इस विषय में दूसरे प्रान्त के विद्यार्थियों को एक सबक सिखाया है, जिसके अनुसार काम कर बंगाल के छात्र भी लाभ उठा सकते हैं।'

इसी प्रकार अन्य पत्रों ने भी इस संस्था की भूरि-भूरि प्रशंसा की थी।

बिहार में देश-भक्तों को तैयार करने का यश पहले पहल बिहारी छात्र-सम्मेलन को ही है। इसीने बिहार में कार्यकर्त्ताओं का वह दल तैयार किया, जिसने सब प्रकार से अपने प्रान्त की उन्नति करने का बीड़ा उठाया। राजेन्द्र बाबू ही वह व्यक्ति हैं, जिन्होंने ऐसी लाभदायक संस्था को जन्म दिया।

इस संस्था के जन्म के समय बिहार में और कोई राजनीतिक संस्था नहीं थी। सरकार भी इसके संगठन का सिक्का मानती थी। असहयोग के समय इस संस्था ने भी असहयोग करने का प्रस्ताव स्वीकृत किया था। आज बिहार में जो जागृति दिखायी पड़ती है, उसका बीज बोने का पुण्य इसी संस्था ने कमाया था। इस संस्था की स्थापना कर राजेन्द्र बाबू ने बिहार प्रान्त के निर्माताओं में प्रथम स्थान प्राप्त किया है।

पटना-विश्वविद्यालय

राजेन्द्र बाबू ने पटना-विश्वविद्यालय को एक आदर्श शिक्षा-संस्था बनाने में बहुत परिश्रम किया

था। इसकी बुराइयों को दूर कराने में आपने अपनी शक्ति भर कुछ उठा नहीं रखा। आप यह अच्छी तरह समझते थे कि हमारी आजकल की अंग्रेजी-शिक्षा से हमारा कभी लाभ नहीं हो सकता। पटना-विश्वविद्यालय में भी ऐसे कानून कायदे बनने जा रहे थे जो विद्यार्थियों के लिये कभी हितकारी नहीं हो सकते थे।

सन १०,१२ में बिहार प्रान्त बंगाल से अलग किया गया। इसी साल यहाँ एक विश्वविद्यालय खोलने की चर्चा चली। विश्वविद्यालय का मसविदा बनाने के लिये एक नैथम कमिटी कायम की गयी। इस कमिटी ने विश्वविद्याजय का जो रूप ठीक किया था, वह कई दृष्टि से हानिकर था। उसके अनुसार प्रान्त के बहुत थोड़े लोगों को ऊँची शिक्षा मिल सकती थी। गरीब विद्यार्थियों के लिये विश्वविद्यालय का द्वार बंद सा रखा गया था।

राजेन्द्र बाबू ने कमिटी के मसविदे का विरोध किया। इन्हें यह मसविदा शिक्षा को बढ़ाने की जगह घटानेवाला मालूम हुआ। उसी साल सन्

१९१३ में मुँगेर में बिहारी छात्र-सम्मेलन का अधिवेशन होने वाला था। राजेन्द्र बाबू ने सभापति पद से उस मसविदे की बुराइयाँ लोगों के सामने रक्खीं। सरकार ने इनकी बतायी बुराइयों की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया और सन १९१६ में बड़ी कौंसिल में उसी मसविदे के आधार पर पटना-विश्वविद्यालय-बिल पेश हुआ।

राजेन्द्र बाबू हिम्मत हारनेवाले जीव नहीं थे। इन्होंने उस बिल के खिलाफ प्रान्त भर में आन्दोलन शुरू कर दिया। बिहार-प्रान्तीय एसोसिएसन की एक खास बैठक बुलाई गई और उसमें उस बिल पर विचार करने के लिये बड़े-बड़े लोगों की एक कमिटी बनायी गयी। इसके साथ ही बहुत से परचे बिल के दोषों एवं असुविधाओं को दिखाते हुए प्रकाशित किये गये। पटना-विश्वविद्यालय-बिल के सम्बन्ध में राजेन्द्र बाबू के परिश्रम और लगन को देख कर उस समय बिहार के सभी बड़े-बड़े नेताओं ने इनकी तारीफ की थी।

राजेन्द्र बाबू के जी-तोड़ आन्दोलन का नतीजा यह हुआ कि बिल में बहुत कुछ सुधार

कर दिया गया। उसके अनुसार जिस पटना-विश्व-विद्यालय की स्थापना हुई वह कई बातों में अन्य विश्वविद्यालयों से अच्छी रही। विश्वविद्यालय के खुलने पर उसकी सिनेट के एक सदस्य राजेन्द्र बाबू भी बनाये गये। ये सिनेट के एक प्रमुख सदस्य माने जाते थे। सिनेट की सभी मुख्य-मुख्य कमिटियों में राजेन्द्र बाबू का नाम रहता था। विश्वविद्यालय के लिये नियम बनाने और स्त्रियों के लिये अलग पाठ्य-क्रम बनाने के लिये जो कमिटियों बनीं उनमें राजेन्द्र बाबू भी थे। ये विश्व-विद्यालय में कई विषयों के परीक्षक भी हुआ करते थे।

राजेन्द्र बाबू हमेशा यह चाहते रहते थे कि विश्वविद्यालय का खर्च कम से कम किया जाय। इससे गरीब विद्यार्थी भी आसानी से ऊँची शिक्षा प्राप्त कर सकते थे। सन् १९१७ में सिनेट की बैठक में विश्वविद्यालय का बजट पेश किया गया तब राजेन्द्र बाबू ने उसमें कई तरह की काटछाँट का प्रस्ताव रखा। इनका कहना था कि रजिस्ट्रार का वेतन एक हजार मासिक से पाँच सौ कर दिया

जाय और शिक्षकों के वेतनों में भी २५ सैकड़ा कमी कर दी जाय। लेकिन आपकी बातों पर सरकार का विशेष ध्यान नहीं गया।

राजेन्द्र बाबू अंग्रेजी भाषा द्वारा शिक्षा देने की बुराइयों को भी अनुभव करते थे। इसके कारण विद्यार्थियों को फिजूल अधिक परेशानी उठानी पड़ती है। इनका मत था कि शिक्षा का माध्यम देशी भाषा बनायी जाय। अपने काम में इन्हें बहुत कुछ सफलता भी मिली। सन् १९२० में देशी-भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने के लिये एक कमिटी बना दी गयी। उसी साल नवम्बर में जब सिनेट की बैठक हुई तो राजेन्द्र बाबू ने देशी भाषा को इन्ट्रेन्स तक शिक्षा का माध्यम बनाने का प्रस्ताव रखा। अपने प्रस्ताव के समर्थन में इन्होंने देशी-भाषा के गुणों को दिखाते हुए एक बड़ा सुन्दर भाषण दिया। इनके भाषण का और सदस्यों पर बड़ा अच्छा असर पड़ा और इनका प्रस्ताव बहुमत से पास हो गया। उस समय तक भारत के और किसी विश्वविद्यालय में इस ढंग का प्रस्ताव पास नहीं हुआ था।

विश्वविद्यालय में देशी-भाषा को इन्ट्रेन्स तक शिक्षा का माध्यम बनाने का प्रस्ताव तो पास हो गया, पर उसके अनुसार काम करने का कोई विशेष प्रयत्न नहीं किया गया। राजेन्द्र बाबू असहयोग आन्दोलन के कारण विश्वविद्यालय से अलग हो गये। इसका परिणाम यह हुआ कि उस प्रस्ताव का इनके समान और कोई दूसरा समर्थ विश्वविद्यालय में नहीं रह गया।

राजेन्द्र बाबू जब तक पटना विश्वविद्यालय में रहे और इन्होंने जो जो काम किये उनसे इनकी शिक्षा-सम्बन्धी विचारों का पता चलता है। देश को कैसी शिक्षा चाहिये यह बात राजेन्द्र बाबू खूब अच्छी तरह जानते हैं। पटना-विश्वविद्यालय को बहुत अंशों में सुधारने का यश आपको ही प्राप्त हुआ है।

चम्पारण-सत्याग्रह

राजेन्द्र बाबू को आज हम जिस रूप में अपने बीच में देख रहे हैं, उसका श्रीगणेश चम्पारण सत्याग्रह के समय ही हुआ था। उसी समय

इन्होंने सादगी और त्याग का असली पाठ सीखा था। यों तो शुरू से ही हम राजेन्द्र बाबू को त्याग की भावना से भरे हुए देखते हैं, पर उसको काम का रूप शुरू-शुरू चम्पारण-सत्याग्रह ही के समय मिला।

उस समय चम्पारण के किसान निलहे साहबों के कारण बहुत परेशान थे। उन्हें कानूनन् फी बिगहे पीछे तीन कठे जमीन में नील बोना पड़ता था। इसके साथ ही बेगारी की चाल भी खूब चली हुई थी। बेचारे किसानों को बात-बात में बेगार करना पड़ता था। चूंकि बिगहे पीछे तीन कठे में नील बोना पड़ता था। इसलिये उस प्रथा को 'तीन कठिया' कहा जाता था। इस तीनकठिया की चाल को दूर करने की बहुत कुछ कोशिश की गयी थी, पर सफलता नहीं मिली थी। सन् १९१६ में लखनऊ काँग्रेस में बिहार के नामी नेता श्रीब्रजकिशोर प्रसाद जी और बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी ने इस प्रथा के विरुद्ध प्रस्ताव पास कराया। लखनऊ ही में श्रीराजकुमार शुक्ल नाम के चम्पा-रण के एक किसान ने महात्मा गाँधी से वहाँ चल

कर किसानों की दुर्दशा देखने की प्रार्थना की। वे ही सन् १९१७ में गाँधी जी को चम्पारण ले आये।

चम्पारण आकर गाँधी जी ने किसानों की दशा की जाँच करनी चाही लेकिन तिरहुत-कमिश्नर को यह बात पसन्द नहीं आयी। उसने गाँधी जी को कमिश्नरी से २४ घंटे के भीतर निकल जाने का हुक्म दिया। गाँधी जी के विरोध करने पर उन पर मुकदमा भी चला, पर थोड़े दिनों बाद वह उठा लिया गया। इन दिनों राजेन्द्र बाबू पुरी गये हुए थे। वहाँ से लौटकर ये गाँधी जी के काम में मदद करने के लिये अपने कुछ साथियों सहित उनके पास पहुँच गये। राजेन्द्र बाबू ने अपनी वकालत बन्द कर गाँधी जी के काम में भरपूर मदद की।

दिन-रात मिहनत करके हजारों किसानों के बयान लिखे गये। आखिर में लेफ्टिनेन्ट गवर्नर साहब ने एक सरकारी जाँच कमिटी बनायी। गाँधी जी भी उसके एक सदस्य बनाये गये और अन्त में कमिटी की रिपोर्ट पेश होने पर सन् १९१८ में तीनकठिया की प्रथा उठा दी गयी।

गाँधी जी ने भारत में पहले-पहल चम्पारण ही में अपने सत्याग्रह-अस्त्र का प्रयोग किया। राजेन्द्र बाबू शुरू से आखिर तक इस काम में गाँधी जी के साथ रहे। उन्होंने अपनी आत्म-कथा में भी राजेन्द्र बाबू के सेवा-भाव की बहुत प्रशंसा की है। गाँधी जी के साथ रहकर इन्होंने स्वावलम्बन और सादगी का बड़ा अनूठा पाठ सीखा।

गाँधी जी के साथ काम करते समय ही राजेन्द्र बाबू ने देखा कि गाँवों में असली सुधार-काम किस प्रकार हो सकता है। इसके लिये हमें अपने को भी एक देहाती बना देने की जरूरत है। इस समय के अनुभवों को राजेन्द्र बाबू हमेशा काम के रूप में करके दिखाते रहे हैं। इसी समय इन्होंने छूआछूत को भी पूरी तौर से दूर हटाने में सफलता प्राप्त की थी। महात्मा जी के साथ जो लोग काम करते थे, वे भिन्न-भिन्न जातियों के थे। पहले-पहल सब लोगों की रसोई अलग-अलग चौकों में बनती थी। बाद में गाँधी जी ने सबों की रसोई एक ही जगह बनने का प्रस्ताव रखा। सबों ने सहर्ष इस प्रस्ताव को स्वीकार किया।

मनुष्य को अपना काम स्वयं करने में नहीं लजाना चाहिये, इस बात की असली शिक्षा राजेन्द्र बाबू को चम्पारण-सत्याग्रह के समय ही मिली थी। एक बार मोतिहारी में दूसरा डेरा बदलना था। दिन भर काम में फँसे रहने के कारण लोगों को रात के नौ बजे डेरा बदलने के लिये फुर्सत मिली। उस समय कोई कुली न मिलता देख महात्मा जी ने खुद सामान ढोना शुरू किया। राजेन्द्र बाबू आदि भी उनकी देखादेखी अपना-अपना सामान ढोने लगे। दूसरे डेरे पर पहुँच कर लोगों ने मकान को खुद झाड़ू देकर साफ भी किया। एक साथ रहते समय लोग आपस में एक दूसरे के जूठे बर्तन भी बड़ी खुशी से मलते थे। पानी खींचने आदि का काम भी खुद हाथों से पूरा कर लिया जाता था। इस प्रकार महात्मा जी की संगति से राजेन्द्र बाबू ने प्रत्यक्ष रूप से त्याग और तपस्या का जीवन बिताना सीखा।

चम्पारण में गाँधी जी के साथ रहते समय राजेन्द्र बाबू ने जो अनुभव प्राप्त किये उनका राजेन्द्र बाबू के वर्त्तमान रूप को बनाने में मुख्य

हाथ रहा है। उन्हीं अनुभवों के सहारे ये अपने आपको दीनों की सेवा करने के इतने योग्य बना सके हैं।

काँग्रेस में

राजेन्द्र बाबू अपने विचारों और सिद्धान्तों के बड़े ही कट्टर हैं। एक बार काँग्रेस में आकर ये आज तक कभी उससे अलग नहीं हुए। हर समय, हर मौके पर इन्होंने काँग्रेस की योजनाओं का ही पालन किया। जब राजेन्द्र बाबू एम० ए० में पढ़ते थे तभी ये शुरू-शुरू १९०६ में काँग्रेस में शामिल हुए। उस समय से ये बराबर काँग्रेस के कामों में भाग लेते रहे और जब तक कोई खास कारण न आ पड़ा तब तक इसके हर अधिवेशन में सम्मिलित होते रहे। सन १९११ ई० में शुरू-शुरू ये प्रतिनिधि के रूप में काँग्रेस में शामिल हुए। सन् १९१२ में ये भारतीय काँग्रेस-कमिटी के सदस्य भी चुन लिये गये।

सन् १९२० के असहयोग आन्दोलन के समय से राजेन्द्र बाबू का सारा समय काँग्रेस-

कार्यों में ही जाने लगा। सन् १९१९ में रौलेट ऐक्ट के कारण सारे देश में जो भारी हड़ताल हुई थी, उसमें भी राजेन्द्र बाबू ने पूरा भाग लिया था। असहयोग आन्दोलन के छिड़ते ही बिहार प्रान्त को राह दिखानेवालों में प्रमुख यही थे। आन्दोलन छिड़ते ही इन्होंने अपनी हजारों रुपये मासिक आय की वकालत पर लात मार दी। इनके साथ-साथ श्रीब्रजकिशोरप्रसाद, श्रीकृष्णसिंह आदि कई लोगों ने भी अपनी वकालत छोड़ दी और सबों ने राजेन्द्र बाबू के नेतृत्व में काम करना शुरू किया।

उन्हीं दिनों महात्मा गाँधी ने बिहार प्रान्त का दौरा किया, जिससे लोगों में बड़ा उत्साह छा गया। सारे प्रान्त के संगठन का भार राजेन्द्र बाबू पर ही पड़ा। पटने में 'बिहार-विद्यापीठ' नाम के राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना की गयी। इसी समय बेजवाड़ा काँग्रेस में देश को संगठित करने के लिये जोरदार कार्यक्रम बनाया गया। भारत भर में एक करोड़ काँग्रेस के सदस्य बनाने, तिलक स्वराज्य फंड में एक करोड़ रुपये इकट्ठा करने और २० लाख चरखे चलाने का प्रस्ताव पास किया गया। राजेन्द्र

बाबू पूरे उत्साह के साथ अपने प्रान्त के हिस्से का काम पूरा करने में जुट गये। जगह जगह काँग्रेस कमिटियाँ खोली गयीं, तिलक स्वराज्य फंड के लिये लाखों रुपये इकट्ठे किये गये। प्रान्त भर में लाखों चरखे चलने लगे और कई खद्दर-डिपो भी खोले गये। मादक द्रव्यों और विदेशी वस्त्रों का जोरों से बहिष्कार होने लगा। अपने प्रान्त को आगे बढ़ाये रखने के लिये राजेन्द्र बाबू ने जी-जान से कोशिश शुरू कर दी।

असहयोग आन्दोलन के कामों को देखकर सभी बड़े बड़े नेता राजेन्द्र बाबू की कार्य-शक्ति से परिचित हो गए। सन् १९२१ में जब अहमदाबाद में काँग्रेस का अधिवेशन हुआ तो राजेन्द्र बाबू उसकी कार्य-समिति के सदस्य चुने गये। अहमदाबाद की काँग्रेस के बाद ही चौरीचौरा का उपद्रव हो गया और असहयोग आन्दोलन रोक दिया गया। इस समय बहुतों ने आन्दोलन बंद करने के लिये गाँधी जी पर दोष लगाये, पर राजेन्द्र बाबू पहले ही के समान संगठन कार्य में जुटे रहे।

सन् १९२२ में गया में काँग्रेस का अधिवेशन

किया गया। देशबन्धु दास जी सभापति बनाये गये। अधिवेशन होने के पहले ही गाँधी जी गिर-फ्तार कर लिये गये। इस समय काँग्रेस में दो दल हो गए। एक दल तो संगठन कार्यों का समर्थक था और दूसरा दल कौंसिलों में जाने का समर्थक करता था। राजेन्द्र बाबू और राजगोपालाचारी जी के प्रयत्न से काँग्रेस ने संगठन कार्यों की योजना को ही स्वीकार किया, पर उसमें दो दल बने ही रहे। राजेन्द्र बाबू इस साल काँग्रेस के प्रधान मंत्री बनाये गये। इन्होंने देश भर का दौरा कर संगठन कार्य करने के लिये प्रचार करना शुरू किया। बहुत कोशिश करने पर भी काँग्रेस के दोनों दल आपस में नहीं मिल सके। अन्त में काँग्रेस कार्य-समिति ने इस्तीफा देदिया। इसके बाद दूसरी कार्य-समिति बनी और दोनों दलों में मेल कराने में असमर्थ होने पर उसे भी इस्तीफा देना पड़ा। तीसरी कार्य-समिति ने कौंसिल में जानेवालों को जाने की इजाजत देदी साथ ही सत्याग्रह और संगठन के समर्थकों को भी काम करने की स्वतं-त्रता दी गयी।

सन् १९२४ में गाँधी जी जेल से छूटे। काँग्रेस के भेद-भाव को दूर करने के लिये उन्होंने उसका भार स्वराज्य पार्टी (कौंसिल के समर्थकों) को सौंप दिया और खुद अपने साथियों सहित संगठन कार्य में जुट गये। इस कार्य में गाँधी जी के मुख्य सहायकों में राजेन्द्र बाबू भी एक थे। इन्हें पक्का विश्वास था कि बिना रचनात्मक काम किये स्वराज्य नहीं मिल सकता। इन्होंने प्रान्त भर में काँग्रेस कमिटी खोलने, राष्ट्रीय शिक्षा का प्रचार करने, खद्दर तैयार करने आदि का काम जोरों से शुरू कर दिया। इन्हीं के प्रयत्न के कारण बिहार सस्ती खादी तैयार करने में और प्रान्तों से बाजी मार ले गया। बिहार के अलावा इन्होंने दक्षिण भारत में भी खद्दर के प्रचार के लिये दौरा किया। राजेन्द्र बाबू के खद्दर सम्बन्धी कामों की गाँधी जी ने बार-बार तारीफ की थी।

राजेन्द्र बाबू का अपने प्रान्त में इतना जोर था कि स्वराज्य पार्टी कभी वहाँ जोरदार नहीं बन सकी। जब काँग्रेस ने स्वयं कौंसिल में जाने का प्रस्ताव पास किया तो यहाँ भी लोगों ने उसमें

सहयोग दिया। राजेन्द्र बाबू खुद कौंसिल में नहीं गये और न जाने के पक्ष में रहे तो भी कौंसिलों में जाने के पक्षपाती इनसे सदा राय लिया करते थे। इससे राजेन्द्र बाबू की योग्यता और लोग इनका कितना आदर करते हैं, इसका जबर्दस्त सबूत मिलता है।

कांग्रेस के काम के साथ-साथ राजेन्द्र बाबू और सार्वजनिक सभाओं में भी भाग लेते रहे। ये अखिल भारतीय और प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य सम्मेलन के सभापति रह चुके हैं। सन् १०,११ में इन्होंने श्रीपरमेश्वरलाल के साथ मिलकर बिहार हिन्दू सभा की स्थापना की। अखिल भारतीय हिन्दू महासभा के कार्यों में भी आपने पूरा हाथ बँटाया।

धीरे धीरे समय के साथ बिहार प्रान्त भावी युद्ध के लिये तैयार होने लगा। सन १०,२८ में कलकत्ता-काँग्रेस में सरकार को औपनिवेशिक स्वराज्य देने के लिये एक साल की मुहलत दी गयी। इस बीच राजेन्द्र बाबू ने पूरी तौर से अपने प्रान्त का संगठन किया। इनके कार्यों का मूल्य

सन १९२९ के सत्याग्रह आन्दोलन में मालूम हुआ। इस साल लाहौर कांग्रेस में पूर्ण स्वतंत्रता का प्रस्ताव पास किया गया। सारे देश में जोरों से आन्दोलन चल पड़ा। बिहार में भी चौकीदारी टैक्स बन्दी, नशीली चीजों को छोड़ना। विदेशी वस्त्र-बहिष्कार आदि काम जोरों से चले। इस आन्दोलन में हज़ारों की संख्या में लोग जेलों में गये। कइयों की जायदाद बरबाद हुई। सारे देश में त्याग और बलिदान के नाते बिहार का दूसरा नम्बर रहा। इस सफलता का सारा यश राजेन्द्र बाबू को ही दिया जा सकता है।

इस आन्दोलन में राजेन्द्र बाबू को कई बार जेल जाना पड़ा। कई बार इन्हें स्थानापन्न राष्ट्र-पति का पद भी मिला। जिस समय सरकार के साथ क्षणिक संधि की बातचीत चली उस समय कांग्रेस के अध्यक्ष राजेन्द्र बाबू ही थे। उसी समय गाँधी-इरविन समझौता हुआ था। सन् १९३२ में पुरी में कांग्रेस-अधिवेशन होने वाला था। इस अधिवेशन के सभापति राजेन्द्र बाबू ही बनाये जाने वाले थे। इसी बीच गाँधी जी के

इंगलैंड से लौटने पर आन्दोलन फिर से शुरू हो गया। पुरी की काँग्रेस नहीं होने पायी।

आन्दोलन जब चल ही रहा था तभी गाँधी जी ने अछूतों के प्रश्न को लेकर जेल ही में उपवास करना शुरू कर दिया। उनके उपवास करने का कारण अछूतों के लिये पृथक निर्वाचन का मिलना था। देश के सभी मुख्य नेता इस प्रश्न को सुलझाने में जुट गये। राजेन्द्र बाबू ने भी इसमें पूरा हाथ बटाया। पूने में उच्च जाति के हिन्दुओं और अछूतों की सभा बुलाई गयी। उसमें अछूतों को पृथक निर्वाचन देने का विरोध किया गया। सरकार ने भी इसे स्वीकार कर पृथक निर्वाचन देने का विचार छोड़ दिया और इस तरह गाँधी जी का उपवास समाप्त हुआ।

इस घटना के बाद अछूतोद्धार का काम बड़े जोरों से चला। राजेन्द्र बाबू ने सारे प्रान्त में इसके लिये जोरों से आन्दोलन शुरू किया। जगह-जगह अछूतों की सभाएँ की गयीं, उनके लिये, कुएँ और स्कूल खोले गये। उनके मुहल्लों की सफाई की गयी तथा गरीब विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति

देने का प्रबन्ध किया गया। इस प्रकार अछूत आन्दोलन में भी राजेन्द्र बाबू ने अपने प्रान्त को पीछे नहीं रहने दिया।

इसी बीच अछूतोद्धार के काम में पूरा सहयोग देने के लिये श्रीराजगोपालाचारी ने अपनी जगह पर राजेन्द्र बाबू को काँग्रेस का स्थानापन्न राष्ट्र-पति बना दिया। राष्ट्रपति की हैसियत से इन्होंने सन् १९३३ को चौथी जनवरी को सत्याग्रह-संग्राम की वर्षगाँठ मनाने के लिये एक वक्तव्य निकाला। इसी अपराध में इन्हें १५ मास की सख्त कैद की सजा मिली। जेल में इनका दमा का रोग उभड़ पड़ा। हालत बहुत खराब होने पर सरकार ने मियाद पूरी होने के एक महीना पहले ही इन्हें छोड़ दिया। इनके जेल से छूटने के दो दिन पहले ही १५ जनवरी १९३४ को बिहार में भयंकर भूकम्प आया। जेल से छूटते ही भूकम्प-पीड़ितों की सहायता करना राजेन्द्र बाबू का मुख्य लक्ष्य बना। इस समय देश ने इनकी सेवाओं का योग्य बदला चुकाने के लिये इन्हें अपने राष्ट्रपति के गौरवयुक्त पद पर बिठाया है।

बिहार-विद्यापीठ

राजेन्द्र बाबू के द्वारा किये गये सार्वजनिक कामों में बिहार-विद्यापीठ की स्थापना का स्थान बहुत ऊँचा है। इसके द्वारा इन्होंने बिहार प्रान्त में होनेवाले राष्ट्रीय कार्य की नींव मजबूत कर दी। आज यहाँ जो कुछ राष्ट्रीय हलचल दिखाई पड़ रहा है उसके कर्णधार अधिकतर राष्ट्रीय विद्यालयों द्वारा ही तैयार किये गये हैं। राजेन्द्र बाबू इने-गिने ठोस काम करनेवालों में से हैं। जिस राष्ट्र या देश के लोगों को जैसी शिक्षा दी जाती है वह वैसा ही बनता है। इसी विचार को सामने रखकर राजेन्द्र बाबू ने राष्ट्रीय शिक्षा की ओर ध्यान दिया। इसके बिना देश की स्वाधीनता हासिल करने के लिये सब कुछ सहनेवाले सैनिकों का मिलना मुश्किल होता है।

यों तो राजेन्द्र बाबू बहुत पहले से ही अंगरेजी ढंग की शिक्षा के विरोधी थे और कोई राष्ट्रीय शिक्षा संस्था स्थापित करने का विचार कर रहे। थे, पर इनके विचार को काम का रूप सन १९२१ में

मिला। इस समय स्कूल और कालेजों से झुंड के झुंड विद्यार्थी असहयोग करके निकले आ रहे थे। उनकी पढ़ाई का कोई प्रबन्ध करना बड़ा जरूरी था। राजेन्द्र बाबू को राष्ट्रीय विद्यालय खोलने का यह अच्छा मौका दिखायी पड़ा। सन् १९२१ की १० वीं फरवरी को बिहार विद्यापीठ की पढ़ाई शुरू कर दी गयी।

शुरू शुरू में विद्यापीठ बड़े सुन्दर ढंग से चलता रहा। यह दीघाघाट के पास स्थापित है। राजेन्द्र बाबू इसके उपकुलपति (वाइस-चान्सलर) बनाये गये और स्व० मौलाना मजहरूल हक साहब कुलपति। बाद में राजेन्द्र बाबू ही इसके कुलपति बनाये गये। इस संस्था को समय समय पर बड़े ही योग्य अध्यापकोंका सहयोग मिलता रहा है। उनके सहयोग ने इस संस्था को एक उच्च शिक्षा-संस्था का रूप दे दिया। राजेन्द्र बाबू स्वयं भी समय समय पर विद्यापीठ में पढ़ाने का काम करते रहे।

विद्यापीठ को आदर्श शिक्षा-संस्था बनाने के लिये राजेन्द्र बाबू ने कुछ उठा नहीं रखा। इसके पुस्तकालय को सुन्दर बनाने के लिये इन्होंने अपनी

सभी पुस्तकें इसमें दे दी थीं। असहयोग के ज़माने में इस संस्था में बड़े योग्य विद्यार्थी भर्ती हुए थे। कुछ तो थोड़े समय बाद फिर से सरकारी स्कूलों में लौट गये, पर जो बचे उनमें से आज बहुत से प्रान्त के भिन्न-भिन्न स्थानों में देशोन्नति का काम सुन्दर ढंग से चला रहे हैं।

बिहार विद्यापीठ के अलावा राजेन्द्र बाबू और इनके साथियों की कोशिश से प्रान्त भर में बहुत से राष्ट्रीय विद्यालय खोले गये थे। जून सन् १९२२ में सारे प्रान्त में ४१ हाईस्कूल, और करीब ६०० मिडिल और प्राइमरी स्कूल चलाये जा रहे थे। उनमें हाईस्कूलों में ४५००० और मिडिल तथा प्राइमरी स्कूलों में १७००० विद्यार्थी शिक्षा पाते थे। देश भर में राष्ट्रीय-शिक्षा का इतना जोरदार प्रचार और किसी प्रान्त में नहीं हो सका था। अब भी बिहार में कई राष्ट्रीय हाईस्कूल चलाये जा रहे हैं। राष्ट्रीय शिक्षा का इतना अधिक विस्तार होने का अधिकांश श्रेय राजेन्द्र बाबू को ही है।

बिहार के राष्ट्रीय विद्यालय और आश्रमों का इसकी उन्नति में जबर्दस्त हाथ रहा है। इन्हीं

जगहों में ऐसे हजारों कार्यकर्त्ता तैयार किये जा सके जो प्रान्त के राष्ट्रीय हलचल की जान हैं। इन संस्थाओं ने प्रान्त में राष्ट्रीय कार्यों की नींव ऐसी मजबूत कर दी है की भविष्य में उनके नष्ट होने का बिलकुल डर नहीं है। इतना सुन्दर और ठोस काम राजेन्द्र बाबू के मजबूत हाथों द्वारा ही हो सका है। इसके कारण ही आज इनकी गिनती देश के सच्चे शुभचिन्तकों में हो रही है।

सेवा-कार्य

राजेन्द्र बाबू दीनों और गरीबों की पुकार पर चुपचाप बैठे रहनेवाले आदमी नहीं हैं। जहाँ कष्ट और तकलीफ दिखायी पड़ता है वहाँ ये फौरन मदद के लिये जा पहुँचते हैं। उस समय इन्हें अपने स्वार्थ की ज़रा भी परवाह नहीं रहती। असहयोग आन्दोलन शुरू होने के बहुत पहले से ही ये अपने गरीब भाइयों की समय-समय पर मदद करते रहे हैं। जब-जब देश में बाढ़ या अकाल का प्रकोप हुआ राजेन्द्र बाबू जी-जान से लोगों के कष्ट दूर करने में लग गये।

पहले पहल समाज-सेवा का अवसर इन्हें सन १९१३ में मिला। उस समय दामोदर नदी में जोरों की बाढ़ आयी थी। बर्दमान तथा उसके पास के और जिले पानी से डूब गये थे। बाढ़-पीड़ितों के लिये कलकत्ते में चन्दा हो रहा था। राजेन्द्र बाबू भी जाकर उस सहायता-कार्य में शामिल हो गये। उसी समय बिहार की पुनपुन नाम की नदी में भी जोरों से बाढ़ आयी। बाढ़ और बिहार का सबडिविजन जलमग्न हो गया। राजेन्द्र बाबू को जब इसका हाल मालूम हुआ तो वे फौरन अपनी वकालत रोक कर मदद के लिये कलकत्ते से दौड़ आये। उस समय आप दिन-दिन भर अपने साथियों के संग नावें लेकर लोगों की मदद करते रहते। शाम को रेलवे के किनारे या किसी स्टेशन पर आकर रात बिताते। सन १९१३ में एक हाईकोर्ट के नामी वकील का इस तरह पीड़ितों की मदद करना सचमुच नयी बात थी। अंगरेजी शान के उस जमाने में राजेन्द्र बाबू ही वह व्यक्ति थे जो दीनों की सच्ची सेवा करना जानते थे।

सन् १९२३ में गंगा में बड़ी भयंकर बाढ़ आयी। उसकी भयंकरता का बखान आज तक लोगों के मुँह से सुना जाता है। शाहाबाद, पटना, सारन, मुँगेर आदि जगहों में लोगों को बहुत अधिक हानि उठानी पड़ी थी। उन्हें न खाने को अन्न मिलता था और न रहने को सुरक्षित स्थान। ऐसे समय राजेन्द्र बाबू ने बम्बई और गुजरात आदि जगहों से रुपये जमाकर लोगों की बड़ी मदद की थी। सन् १९३१ में चम्पारण में भयंकर अकाल पड़ा था। उस समय भी राजेन्द्र बाबू ने शक्ति भर लोगों की मदद की थी।

राजेन्द्र बाबू को सेवा का सबसे महान अवसर १५ जनवरी सन् १९३४ को मिला। इस समय बिहार में ऐसा भूकम्प आया जिसने इसके उत्तरी भाग को एकदम बरबाद कर डाला। लोगों के घर नष्ट हो गये, किसानों के खेतों में बालू भर गयी और करीब ४० हजार लोगों की जानें गयीं। ऐसे दुर्दिन के समय राजेन्द्र बाबू ने प्रान्त की जो सेवाएँ कीं वे स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य हैं।

जिस समय भूकम्प आया उस समय राजेन्द्र

बाबू सत्याग्रह आन्दोलन के कारण १५ महीने की सजा भोग रहे थे। इनका स्वास्थ्य बहुत अधिक खराब होगया था। स्वास्थ्य की खराबी के कारण ही सरकार ने इन्हें मियाद पूरी होने के एक महीना पहले ही १७ जनवरी सन् १९३४ को जेल से रिहा कर दिया। जेल से रिहा होते ही राजेन्द्र बाबू को भूकम्प की भीषणता का समाचार मिला। उस समय ये चल-फिर भी नहीं सकते थे, पर तौ भी ये सहायता-कार्य में जुट गये। भूकम्प-पीड़ितों के लिये बिहार-सेन्ट्रल-रिलीफ-कमिटी (बिहार केन्द्रिय-सहायक-समिति) की स्थापना की गयी और राजेन्द्र बाबू उसके सभापति बनाये गये।

राजेन्द्र बाबू को रोग-शय्या ही रिलीफ-कमिटी का दफ्तर बन गयी। इनकी खाट के चारों ओर सहायक कार्यकर्त्ताओं का आना-जाना लगा रहता था। खाट पर पड़े-पड़े ही इन्होंने अपने देश-वासियों की सेवा का जोरों से श्रीगणेश कर दिया। सारे देश के नाम सहायता के लिये अपील निकाली गयी। राजेन्द्र बाबू ने महात्मा गाँधी, रविन्द्रनाथ ठाकुर आदि महापुरुषों द्वारा विदेशों से भी धन

की अपील करवायी। सहायक-समिति के नाम चारों ओर से सहायता की रकमें आने लगीं। सहायता-कार्य के लिए वायसराय रिलीफ फंड नाम की एक सरकारी सहायक समिति भी कायम की गयी। इसके होते हुए भी राजेन्द्र बाबू की रिलीफ-कमिटी में काफी रुपये आये। इससे राजेन्द्र बाबू के प्रति देशवासियों के विश्वास की भावना का पता लगता है।

ज्योंही राजेन्द्र बाबू चलने-फिरने लायक हुए, इन्होंने सारे प्रान्त का दौरा शुरू किया। घूम-घूम कर लोगों की दुर्दशा का निरीक्षण किया। अब सहायता कार्य और संगठित रूप से चलने लगा। पहले सहायता कार्य बिहारी नेताओं के जिम्मे ही था। बाद में इसके लिये एक अखिल भारतीय समिति बनायी गयी। इसमें महात्मागाँधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, मालवीय जी आदि देश के सभी बड़े-बड़े नेता सम्मिलित किये गये। इन महान व्यक्तियों की राय से सहायता-कार्य और अच्छी तरह चलने लगा। राजेन्द्र बाबू की सेवा, तत्परता और लगन को देख कर सभी बड़े नेताओं ने इनकी प्रशंसा की थी।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि विहार की इस विपत्ति में जैसी सेवा राजेन्द्र बाबू ने की वैसी शायद ही कोई कर सकता था। इसके लिये इन्होंने अपने स्वस्थ्य की कुछ भी परवाह नहीं की। भूकम्प के बाद ही वर्षा के दिनों में बिहार में भयंकर बाढ़ का प्रकोप हुआ। एक तकलीफ से लोगों का छुटकारा भी नहीं हो पाया था कि दूसरी का सामना करना पड़ गया। सहायता-कार्य और भी कठिनाइयों से भर गया। लेकिन राजेन्द्र बाबू हिम्मत हारने वाले व्यक्ति नहीं हैं। भूकम्प और बाढ़ दो-दो विपत्तियों की मार से अधमरे देशवासियों की इन्होंने सब तरह से मदद की। आज भी सहयता-कार्य जारी है। भगवान राजेन्द्र बाबू को दोनों के कष्टों को दूर करने के लिए अधिकाधिक शक्ति दें।

साहित्य-सेवा

देश-सेवा के अन्य कामों के साथ साथ राजेन्द्र बाबू ने हिन्दी-साहित्य की भी समय-समय पर बड़ी सेवा की है। इसके प्रति विद्यार्थी-जीवन से ही आपके हृदय में स्थान है। शुरू-शुरू में आपको

फारसी भाषा की शिक्षा मिली और एफ० ए० तक यही क्रम रहा। लेकिन बी० ए० में पहुँचते ही आपने हिन्दी पढ़ना शुरू किया। शुरू से फारसी और उर्दू पढ़ते रहने पर भी आपको बी० ए० में हिन्दी लेने में जरा भी हिचकिचाहट नहीं मालूम हुई। उस समय पटना विश्वविद्यालय में इसकी पढ़ाई का भी अच्छा इन्तजाम नहीं था। लेकिन राजेन्द्र बाबू ने गरीबी तौर से डेरे पर पढ़कर हिन्दी की काफी योग्यता प्राप्त कर ली। जिस समय लोग अंगरेजी सभ्यता और भाषा के पीछे दीवाने बने फिरते थे। उस समय हिन्दी को इस तरह अपनाना राजेन्द्र बाबू के साहित्य-प्रेम का परिचय देता है।

जिस समय राजेन्द्र बाबू कलकत्ते में पढ़ते थे उस समय वहाँ दो मुख्य साहित्यिक संस्थाएँ थीं—१ हिन्दी-साहित्य-परिषद और बड़ा बाजार-पुस्तकालय। इन दोनों संस्थाओं में बड़े-बड़े साहित्य-सेवी भाग लेते थे। उनमें कुछ के नाम ये हैं—स्व० पं० गोविन्द नारायण मिश्र, पं० जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी, पं० लक्ष्मण नारायण गर्दे, विष्णुराव पराड़कर आदि। राजेन्द्र बाबू भी इन संस्थाओं में बड़े उत्साह से

भाग लेते थे। साहित्य परिषद में इनके लेखपाठ और भाषण हुआ करते थे।

राजेन्द्र बाबू को लेख लिखने और भाषण देने का शौक बहुत पहले से है। ये बराबर पत्र-पत्रिकाओं में लेख लिखते रहे हैं। पुराने पत्र 'भारत-मित्र, 'भारतोदय' तथा 'कमल' आदि में इनके लेख निकलते रहते थे। हिन्दी साहित्य सम्मेलन की लेखमालाओं में भी आपने कई लेख लिखे थे।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन से राजेन्द्र बाबू का शुरू से ही सम्बन्ध रहा है। आप इसके जन्म समय से ही इसकी कार्य समिति के सदस्य रहे हैं। समय समय पर आप प्रान्तीय साहित्य सम्मेलनों और कोकनाडा में सन १०२३ में होने वाले हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के विशेष अधिवेशन के सभापति रह चुके हैं। आपके विचारों में किसी राष्ट्र की निजी भाषा का होना बहुत आवश्यक है। इसके बिना कोई राष्ट्र उन्नत नहीं बन सकता। भाषा की उन्नति पर ही राष्ट्र की उन्नति निर्भर करती है।

राजेन्द्र बाबू के हिन्दी भाषा सम्बन्धी ज्ञान पर

एक घटना से अच्छा प्रकाश पड़ता है। सन् १९२२ में छपरे में बिहार प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अधिवशेन के अवसर पर एक बार हिन्दी भाषण की प्रतियोगिता हुई। शर्त यह थी कि कोई संस्कृत के तत्सम, तद्भव और देशज शब्दों को छोड़ किन्हीं विदेशी शब्दों का प्रयोग न करे। संस्कृत और हिन्दी के नामी विद्वानों ने इसमें भाग लिया। जहाँ और लोगों ने कई-कई गलतियाँ कीं वहाँ राजेन्द्र बाबू की सिर्फ एक गलती हुई और उसे भी इन्होंने तुरत सुधार लिया। जिसकी जितनी गलतियाँ हुईं उसे उतने पैसे जुर्माने देने पड़े।

राजेन्द्र बाबू ने समय-समय पर कई अखबारों का संचालन और सम्पादन भी किया है। कल-कत्ते से आकर पटना में जब इन्होंने वकालत शुरू की तब 'पटना ला वीकली' नाम का पत्र निकाला था। ये और इनके मित्र बाबू वैद्यनाथ नारायण सिंह उसके सम्पादक हुए थे। जब तक वह पत्र चला उसका सम्पादन बड़े सुन्दर ढंग से होता रहा। पटने के 'सर्च लाइट' पत्र के संस्थापकों में एक राजेन्द्र बाबू भी हैं ये बराबर इस पत्र के

संचालक रहे हैं। अब तो पत्र का सारा भार इन्हीं पर आ पड़ा है। हिन्दी साहित्य की सेवा के लिये इन्होंने सन् १९२० में, 'देश' नामक एक हिन्दी साप्ताहिक निकाला था। यह पत्र बहुत वर्षों तक साहित्य और जनता की सेवा करता रहा। प्रारम्भ में इसके सम्पादन का भार राजेन्द्र बाबू पर ही था। इधर कुछ दिनों से यह पत्र बन्द हो गया है।

राजेन्द्र बाबू हिन्दी के अलावा गुजराती और बंगला भी जानते हैं; बंगला का तो इन्हें खूब अच्छा ज्ञान है। राजनीतिक कामों में लगे रहने के कारण ये विशेष साहित्य-सेवा नहीं कर पाते। इन्होंने 'चम्पारण में महात्मा गाँधी' नाम की एक बहुत ही प्रामाणिक पुस्तक हिन्दी में लिखी है। इसका अंगरेजी और गुजराती में भी अनुवाद हो चुका है। राजेन्द्र बाबू ऐसे हिन्दी के समर्थक को देखते हुए इसके सुदिन दूर नहीं दिखायी पड़ते।

यूरोप-यात्रा

राजेन्द्र बाबू को विदेशों में भ्रमण कर वहाँ

की सभ्यता का परिचय प्राप्त करने की इच्छा बहुत दिनों से थी। एक बार विद्यार्थी-जीवन में बी० ए० पास कर लेने पर इंगलैंड जाकर बैरिस्ट्री पढ़ने का इनका विचार भी हुआ था। लेकिन सब तैयारी कर चुकने पर भी वहाँ जाने के मार्ग में रुकावट पड़ ही गई। अन्त में इन्हें सन् १९२८ में यूरोप-यात्रा का अवसर मिला। उस समय इन्हें शाहाबाद के एक रईस बाबू हरिजी के मुकदमे के सम्बन्ध में इंगलैंड जाना पड़ा। मुकदमे के कामों में लगे रहने के कारण राजेन्द्र बाबू को और स्थानों में घूमने का बहुत कम अवसर मिलता था, तो भी इन्होंने मुकदमे के कामों के खतम होने पर यूरोप के मुख्य देश जर्मनी, फ्राँस, इटली, आस्ट्रिया, स्विटजरलैंड आदि का भ्रमण किया।

इंगलैंड में राजेन्द्र बाबू गरीबों की सेविका कुमारी लिस्टर से मिले थे। श्रीमती मीरा बहन की माता लेडी स्लेड से भी इन्होंने मुलाकात की थी। लेडी स्लेड ने इनकी बड़ी खातिरदारी की थी। स्विटजरलैंड में ये श्री रोमाँरोलाँ से मिले थे।

उन दिनों आस्ट्रिया के मशहूर स्थान वियेना में 'अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध-विरोधी-सम्मेलन' हो रहा था। राजेन्द्र बाबू भारत के प्रतिनिधि की हैसियत से उसमें शामिल हुए थे। सम्मेलन की समाप्ति पर उसके सिद्धान्तों के प्रचार के लिये ये आस्ट्रीया की एक सभा में भाषण देने वाले थे। वहाँ कुछ विरोधियों ने इन पर हमला कर दिया। उस हमले की अखबारों ने काफी निन्दा की थी।

इंगलैंड से लौटते समय राजेन्द्र बाबू हालैंड में होने वाले विश्व-युवक-शान्ति-सम्मेलन में भी भारत के प्रतिनिधि के हैसियत से शामिल हुए थे। वहाँ इनका भाषण भी हुआ था। राजेन्द्र बाबू विदेशों में भी अपने देश की प्रतिष्ठा का सदा ध्यान रखते थे। ये वहाँ शुद्ध भी भारतीय खादी का ही व्यवहार करते थे।

सुफल

वर्षों के त्याग और तपस्या के बाद आज भारत ने अपने महान नेता को अच्छी तरह पहचाना है। कोई अपने को कितना ही छिपाने की कोशिश

क्यों न करे लेकिन उसकी महानता कभी न कभी प्रकट हो ही जाती है। आज राजेन्द्र बाबू हम ३५ करोड़ भारतवासियों के हृदय-सम्राट हैं। हमने अपने योग्य नेता का उचित सम्मान कर आज अपना ऋण चुका दिया। सारे भारत ने एक स्वर से इन्हें अपना पथ-प्रदर्शक चुना है। आज ये हमारी राष्ट्रीय महासभा के राष्ट्रपति हैं। भगवान इन्हें दीर्घायु करें, जिससे अधिक से अधिक दिनों तक ये हमारे बीच रह सकें। आज हम दीनों की सारी आशा इन्हीं पर अटकी है।

छात्रहितकारी पुस्तकमाला की पुस्तकें

१—सफलता की कुंजी—स्वामी रामतीर्थ के अमेरिका में दिये हुए प्रसिद्ध व्याख्यान का सुन्दर अनुवाद। मू० ।)

२—ईश्वरीय बोध—स्वामी विवेकानन्द के गुरु स्वामी रामकृष्ण परमहंस के उपदेश-रत्नों का संग्रह। मू० ।।।)

३—मनुष्य-जीवन की उपयोगिता—तिब्बत में प्राप्त एक बहुत प्राचीन पुस्तक का सरस अनुवाद। इसके एक-एक शब्द उपदेशप्रद हैं। मू० ।।=)

४—भारत के दशरत्न—भारत के दस महान् पुरुषों का संक्षिप्त परिचय। मू० ।-)

५—ब्रह्मचर्य ही जीवन है—अपने विषय की भारत भर में एक ही पुस्तक है। इसने लाखों युवकों को पतन के गड्ढे से निकाल कर उनका उद्धार किया है! मू० ।।।)

६—वीर राजपूत—वीर-रस-पूर्ण एक सुन्दर ऐतिहासिक उपन्यास। तिरंगे चित्र से सुशोभित पुस्तक का मू० १)

७—हम सौ वर्ष कैसे जीवें—स्वस्थ, सुख-प्रद जीवन बिताने के लिये सुगम उपाय बतानेवाली पुस्तक। मू० १)

८—वैज्ञानिक कहानियाँ—ले० महात्मा टालस्टाय। मनोरंजक ढंग पर विज्ञान की शिक्षा देने वाली पुस्तक। मू० ।)

९—वीरों की सच्ची कहानियाँ—भारत के वीरों की साहस और वीरता से भरी हुई फड़कती हुई कहानियों का अनुपम संग्रह। मू०।।=)

१०—आहुतियाँ—वीरों के बलिदान की अनुपम कहानियाँ जिनके एक-एक शब्द में जादू का सा असर है। मू० ।।।)

११—पढ़ो और हँसो—गुदगुदी पैदा करनेवाली सात्विक और सुन्दर पुस्तक मू० ।।)

१२—जगमगाते हीरे—नवीन भारत के निर्माण-कर्त्ताओं का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। मू० १)

१३—मनुष्य-शरीर की श्रेष्ठता—इसमें शरीर के भिन्न-भिन्न अंगों का महत्व और उपयोगिता बताई गई है। मू० ।=)

१४—अनमोल रत्न—भारत के ऐतिहासिक महापुरुषों की संक्षिप्त जीवनियाँ दी गई हैं। मू० १।)

१५—एकान्तवास—यह सुरुचिपूर्ण और शिक्षाप्रद कहानियों का सुन्दर संग्रह है। मू० ।।।)

१६—पृथ्वी के अन्वेषण की कथायें—पृथ्वी के दुर्गम दुस्तरस्थलों का पता लगाने वाले, वीरों की फड़कती कहानियाँ। मू० १)

१७—फल, उनके गुण तथा उपयोग—फलाहार पर सुन्दर और उपयोगी पुस्तक। मू० १)

१८—स्वास्थ्य और व्यायाम—इसमें बल बढ़ानेवाले उपयोगी व्यायामों का विवेचन किया गया है। इस विषय पर हिन्दी में यह पहिली ही पुस्तक है। कई चित्रों से युक्त पुस्तक का मू० १।।)

१९—धर्म-पथ—महात्मा गाँधी के धार्मिक विचारों का संकलन किया गया है। २०० पृष्ठवाली पुस्तक का मू० ।।=)

२०—स्वास्थ्य और जल चिकित्सा—इस पुस्तक में सब रोगों पर प्राकृतिक चिकित्सा-विधि बतलाई गई है, जिनसे गरीब से गरीब आदमी भी बिना रुपये पैसे खर्च किये रोगों से मुक्त होकर स्वस्थ बन सकता है। मू०। १।।)

२१—स्त्री और सौन्दर्य—इस पुस्तक में सौन्दर्य, और स्वास्थ्य रक्षा के लिये ऐसे सुगम साधन और सरल व्यायाम बतलाये गए हैं जिनके नियमित रूप से बर्तने से स्त्रियाँ सदा स्वस्थ और सुन्दरी बनी रह सकती हैं। कई चित्रों से सुशोभित पुस्तक का मू० २।।)

मैनेजर—छात्र-हितकारी-पुस्तकमाला, दारागंज प्रयाग